26 जुलाई 2023, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 42, अंक 1, कुल पृष्ठ 36 ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

संस्थापक सम्पादक
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सम्पादक
डॉ. शान्तिकुमार पाटील

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर में
पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट, जयपुर द्वारा आयोजित

46वाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

रविवार, 13 अगस्त से 20 अगस्त, 2023 तक

मंगल आमंत्रण

शिविर में पधारने हेतु आपको हमारा हार्दिक आमंत्रण

वीतराग-विज्ञान (479)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

संस्थापक सम्पादक :
तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सम्पादक :
डॉ. शान्तिकुमार पाटील

सह-सम्पादक :
पं. अरुणकुमार शास्त्री

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
व्हाट्सऐप नं. : 7412078704
E-mail : veetragvigyanjpp@gmail.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या

हिन्दी	:	7000
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	**10000**

कैसे समझे : दस धर्म

आचार्यों के सामने भी एक समस्या थी कि उन्हें क्रोधियों को क्षमा समझानी थी; अतः क्षमा को भी क्रोध के माध्यम से समझाना पड़ा। व्यवहारी को व्यवहार की भाषा में समझाना पड़ता है। मुनिजन क्षमा के भण्डार होते हैं। यदि वे अपनी ओर से बोलेंगे तो यही बोलेंगे कि क्षमा का अभाव क्रोध है, पर दुनिया में, भाव होता है वक्ता का और भाषा होती है श्रोता की। यदि श्रोता की भाषा में न बोला गया तो वह कुछ समझ ही न सकेगा।

अतः ज्ञानीजन समझाना तो चाहते हैं क्षमाधर्म, पर समझाते हैं क्रोध की बात करके। बच्चों से बात करने के लिए उनकी ओर से बोलना पड़ता है। जब हम बच्चे से कहते हैं कि माँ को बुलाना, तब हमारा आशय बच्चों की माँ से होता है, अपनी माँ से नहीं: क्योंकि हम जानते हैं कि ऐसा कहने पर बच्चा अपनी माँ को हो बुलायेगा, हमारी माँ को नहीं।

इसप्रकार जब हमें भी क्षमा को क्रोध की भाषा में ही समझना है तो पहले क्रोध को ही अच्छी तरह स्पष्ट करना समुचित होगा।

– धर्म के दशलक्षण : पृष्ठ-12

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 42 (वीर निर्वाण संवत् 2549) 479/अंक : 01

धनि मुनि जगतैं परम उदासी

धनि मुनि जगतैं परम उदासी।
कर्मजनित आचार त्यागिकैं, निज अनुभूति विलासी।।
धनि मुनि जगतैं परम उदासी।।1।।

दुःखजल पूर अगाध भवार्णवतैं, भयभीति निरासी।
ध्यानकृपाण तानि इक छिनमैं, सेन्या मोह विनासी।।
धनि मुनि जगतैं परम उदासी।।2।।

इष्ट-अनिष्ट पदारथ माही, नित समदृष्टि प्रकासी।
परहित में रति, शिवमग में गति, नभसम वर सुखरासी।।
धनि मुनि जगतैं परम उदासी।।3।।

भवजन तारि भवोदधितैं फिर, भये हैं अचलपुर वासी।
'मानिक' तिनकौ अनुभवकरतैं, कटत कर्म की फांसी।।
धनि मुनि जगतैं परम उदासी।।4।।

– कविवर माणिकचन्द खण्डेलवाल

श्री टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा ओयाजित
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में

दशलक्षण महापर्व
एवं
दशलक्षण महामण्डल विधान

19 सितम्बर से 28 सितम्बर, 2023

मंगल आमंत्रण

अध्यात्म से सराबोर जयपुर के दस दिन
आराधना के इस महामहोत्सव में
आप सादर आमंत्रित हैं।

आराधकों के आवास एवं सात्त्विक भोजन की समुचित व्यवस्था रहेगी ताकि आप निवृत्ति के साथ अध्यात्म के रंग में रंगकर आत्मा की आराधना कर सकें।

मंगल सान्निध्य
बाल ब्र. सुमतप्रकाशजी, खनियाँधाना

स्थान सीमित : पहले आओ, पहले पाओ!
सम्पर्क सूत्र : 8949033694

PTST_JAIPUR +91 8949033694 www.ptst.in PTST.LIVE

सम्पादकीय

देखो तत्त्वविचार की महिमा !

जगत के सभी जीव निराकुल, स्वाधीन, सम्पूर्ण व अतीन्द्रिय सुख की ही कामना निरंतर करते हैं और इसके लिए आत्मकल्याण के मार्ग पर ही चलना चाहते हैं; फिर भी सफलता क्यों नहीं प्राप्त होती है? सामान्यजनों को तो यह कहते हुए हम हमेशा सुनते हैं कि -"**आचरण तुम्हारा ठीक नहीं, कल्याण तुम्हारा कैसे हो?**" परंतु हमारा ध्यान इस ओर नहीं जाता कि "**विचार हमारे ठीक नहीं, आचरण हमारा कैसे ठीक हो?**" हमारे आचरण को हमारे विचार ही प्रेरित व प्रभावित करते हैं।

लोक में यह भी कहा जाता है कि '**जैसा पीवे पानी, वैसी होवे वाणी**' और '**जैसा खावें अन्न, वैसा होवे मन**' उसी प्रकार यह बात भी निश्चित है कि हमारे विचार जैसे होंगे वैसा ही हमारा समस्त आचरण होगा।

किसी भी व्यक्ति या वस्तु को देखकर हमारे दो प्रकार के परिणाम तत्काल प्रवर्तित होते हैं। '**तेरा-मेरा या अच्छा-बुरा**' इनमें से 'तेरा-मेरा' का परिणाम मोह का सूचक है तो 'अच्छा-बुरा' का परिणाम राग-द्वेष का प्रवर्तक है। इसका अर्थ हमारे परिणाम निरंतर मोह-राग-द्वेषरूप ही चलते रहते हैं।

जीव के तीन प्रकार के विचार होते हैं - वासनिक, काषायिक और तात्त्विक। उपरोक्त मोह-राग-द्वेष से प्रवर्तित परिणामों से हमारे दो प्रकार के विचार ही प्रवाहित होते हैं वासनिक और काषायिक, तात्त्विक विचार हो ही नहीं पाते।

जब हमने मोह से यह मान लिया कि परद्रव्यों से मुझे सुख मिलेगा, तो पंचेन्द्रिय विषयों की वासना युक्त **वासनिक** परिणाम होना स्वाभाविक है। इन विषयों की प्राप्ति/पूर्ति में यदि असफल रहते हैं तो **क्रोध आदि कषायें** उत्पन्न होती हैं और सफल होते हैं तो **मान आदि कषायें** उत्पन्न होती हैं तथा

इसकी प्राप्ति की इच्छा से **लोभ कषायें** व एन-केन-प्रकारेण प्राप्त करने हेतु **माया आदि कषायें** हुए बिना रहती ही नहीं है।

इसप्रकार इन मोह-राग-द्वेषरूप परिणामों से और इनके कारण होने वाले वासनिक व कषायिक विचारों से हमारा चित्त निरंतर आकुल-व्याकुल रहता है, इसे ही आजकल टेंशन या स्ट्रेस कहा जाता है। इससे बचने के अनेक प्रयास हम करते हैं; परंतु हमें संपूर्ण व स्थाई सफलता नहीं मिल पाती है। इससे बचने की भावना भी निरंतर हम भाते हैं, जैसा कि पण्डित दौलतरामजी कृत देव स्तुति में हम सब प्रतिदिन बोलते हैं -

आतम के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाए।
मैं रहूँ आपमें मैं आप लीन, सो करो होऊँ जो निजाधीन।।14।।

वस्तुत: मोह-राग-द्वेष युक्त विषय-कषाय के परिणामों से बचने का एकमात्र उपाय तात्त्विक विचार ही है। **तत्त्व अर्थात् वस्तु का जैसा स्वरूप है, वैसा ही विचार होना तात्त्विक विचार है।** जब हम वस्तु का यह स्वरूप अच्छी तरह जान लेंगे कि न तो कोई वस्तु 'मेरी-तेरी' है और न ही 'अच्छी-बुरी' तथा न इन पदार्थों में किंचित भी सुख है, तब सहज ही मोह-राग-द्वेषरूप परिणामों का शमन होते हुए वासनिक व कषायिक विचार रुक सकते हैं।

तात्विक विचारों का आधार तत्त्वविचार है। हमारे पूर्वाचार्य व विद्वानों ने हमें सदैव तत्त्वविचार के लिए ही प्रेरित किया है। वादीभसिंहसूरी आचार्य अजितसेन क्षत्रचूड़ामणि में लिखते हैं -

कोऽहं कीदृग्गुण: क्वत्य: किं प्राप्य: किं निमित्तक:।
इत्यूह: प्रत्यहं नो चेदस्थाने हि मतिर्भवेत्।।78।।

अर्थ - मैं कौन हूँ (जीव तत्त्व), मुझ में कौन-से गुण हैं (स्वरूप), मैं किस गति से आया हूँ (आस्रव-बंध तत्त्व), मुझे क्या प्राप्त करना है (मोक्ष तत्त्व), इनके निमित्त-साधन क्या है, (संवर-निर्जरा तत्त्व) इसप्रकार का विचार (तत्त्वविचार) यदि प्रतिदिन न हो तो हमारी बुद्धि निश्चित ही अयोग्य विषयों में (वासनिक व काषायिक परिणामों में) प्रवृत्त होती है।

उपरोक्त प्रकार से तत्त्वविचार के लिए पूर्व में तत्त्वाभ्यास होना जरूरी है।

तत्त्व अभ्यास के लिए स्वाध्याय ही एकमात्र साधन है। अतः आत्महितकारी शास्त्रों का हम आद्योपांत स्वाध्याय अवश्य करें। यदि यह हमारे लिए संभव न हो तो **हम प्रतिमाह आध्यात्मिकसत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के आध्यात्मिक शास्त्रों पर हुए प्रवचनों के अंश तथा तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के तात्त्विक/तार्किक विषयों को इस पत्रिका के माध्यम से आपके पास पहुँचाते हैं और पहुँचाते रहेंगे।** इनका भी स्वाध्याय करें तो भी हमारे प्रयास की पूर्ति हो सकती है। आचार्य उमास्वामी तत्त्वार्थश्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं **(तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्)** व श्रद्धान तत्त्वनिर्णय पूर्वक ही हो सकता है और तत्त्वों का निर्णय मात्र पढ़ लेने (वाचनारूप स्वाध्याय) से संभव नहीं है। इसलिए आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी सम्यक्त्वसन्मुख मिथ्यादृष्टि को संबोधित करते हुए लिखते हैं –

''वहाँ नाम सीख लेना और लक्षण जान लेना यह दोनों तो उपदेश के अनुसार होते हैं – जैसा उपदेश दिया हो वैसा याद कर लेना। तथा परीक्षा करने में अपना विवेक चाहिये। सो विवेकपूर्वक **एकान्त में अपने उपयोग में विचार करे** कि जैसा उपदेश दिया वैसे ही है या अन्यथा है? तथा यदि उपदेश में अन्यथा सत्य भासित हो, अथवा उसमें सन्देह रहे, निर्धार न हो; तो जो विशेषज्ञ हों उनसे पूछे, और वे उत्तर दें उसका **विचार करे।** इसीप्रकार जबतक निर्धार न हो तबतक प्रश्न-उत्तर करे। अथवा समानबुद्धि के धारक हों उनसे अपना विचार जैसा हुआ हो वैसा कहे और प्रश्न-उत्तर द्वारा परस्पर चर्चा करे; तथा जो प्रश्नोत्तर में निरूपण हुआ हो उसका **एकान्त में विचार करे।** इसीप्रकार जब तक अपने अंतरंग में – जैसा उपदेश दिया था वैसा ही निर्णय होकर भाव भासित न हो, तब तक उद्यम किया करे।''

यहाँ टोडरमलजी मात्र पढ़ने या सुनने से अधिक जोर एकांत में विचार करने पर ही दे रहे हैं। जब हम एकांत में एकाग्र होकर विचार करेंगे तो निर्णय की तरफ बढ़ेंगे। हमारे विचार भी सहज ही तात्त्विक होने लगेंगे और उसमें से तत्त्वार्थश्रद्धान प्रकट हो सकेगा। जिसप्रकार गाय के सामने चारा डालने पर वह उसे एक साथ खा लेती है; परंतु उससे न तो वह पुष्ट होती है और न ही स्वादिष्ट दूध बन सकता है। वास्तविक तो जब वह एकांत में बैठकर उसी चारे

में से थोड़ा-थोड़ा लेकर जुगाली करती है, तब वह पुष्ट होकर स्वादिष्ट दूध देती है। अर्थात् गाय का चारा खाने से अधिक महत्त्वपूर्ण है, उसका जुगाली करना। उसी प्रकार पढ़ने-सुनने से अधिक महत्त्वपूर्ण है उस पर एकांत में बैठकर विचार करना। गाय चारे के अंश की तब तक जुगाली करती है, जब तक उसका पूर्ण रस-कस न निकल जाए। उसी प्रकार यह तत्त्वविचार हमें कब तक करना चाहिए - इस पर प्रकाश डालते हुए पण्डितजी स्वयं लिखते हैं -

''इसप्रकार इस जानने के अर्थ कभी स्वयं ही विचार करता है, कभी शास्त्र पढ़ता है, कभी सुनता है, कभी अभ्यास करता है, कभी प्रश्नोत्तर करता है, इत्यादिरूप प्रवर्तता है। अपना कार्य करने का इसको हर्ष बहुत है, इसलिये अन्तरंग प्रीति से उसका साधन करता है। इसप्रकार साधन करते हुए जब तक (1) सच्चा तत्त्वश्रद्धान न हो। (2) 'यह इसीप्रकार है' ऐसी प्रतीति सहित जीवादि तत्त्वों का स्वरूप आपको भासित न हो। (3) जैसे पर्याय में अहंबुद्धि है, वैसे केवल आत्मा में अहंबुद्धि न आये। (4) हित-अहितरूप अपने भावों को न पहिचाने तबतक सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि है। यह जीव थोड़े ही काल में सम्यक्त्व को प्राप्त होगा; इसी भव में या अन्य पर्याय में सम्यक्त्व को प्राप्त करेगा।''

इसप्रकार सर्व समस्याओं का समाधान एक तत्त्वविचार है; परंतु हमारे जीवन में यह क्यों नहीं हो पाता है? तो इसका उत्तर पण्डित खीमचंदभाई इसप्रकार देते हैं - **जिसका होना चाहिए निरंतर स्मरण (तात्विक विचार), उसका हो रहा है विस्मरण और जिसका होना चाहिए विस्मरण (वासनिक-काषायिक विचार) उनका हो रहा है निरंतर स्मरण; इसलिए निरंतर हो रहा है भावमरण (मोह-राग-द्वेष) और होते रहेंगे जन्म-मरण।**

अतः अंत में पण्डितजी के ही प्रेरक शब्दों के साथ विराम लेते हैं - **देखो, तत्त्वविचार की महिमा ! तत्त्वविचाररहित देवादिक की प्रतीति करे, बहुत शास्त्रों का अभ्यास करे, व्रतादिक पाले, तपश्चरणादि करे, उसको तो सम्यक्त्व होनेका अधिकार नहीं; और तत्त्वविचारवाला इनके बिना भी सम्यक्त्व का अधिकारी होता है।**

संस्थापक सम्पादक की कलम से...

सम्पादकीय

अधूरी उल्टी आत्मकथा

गतांक से आगे...

8

निश्चय-व्यवहार

आध्यात्मिकसत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के द्वारा की गई आध्यात्मिक क्रान्ति के युग के बीच में एक ऐसा समय आया कि जब गाँव-गाँव में निश्चय-व्यवहार के नाम से पार्टियाँ बन गईं थीं। निश्चयपार्टी और व्यवहारपार्टी के अलग-अलग ग्रुप बन गये थे और उनके अलग-अलग मन्दिर बनने लगे थे।

जब उन पार्टियों के कारणों का अध्ययन किया गया तो पता लगा कि इसका मूल कारण नयों सम्बन्धी अज्ञान ही है। सारी समाज तो नयज्ञान से अपरिचित थी ही; मुमुक्षुसमाज भी नयों के नाम पर बस उतना ही जानती थी, जितना मोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अध्याय में निश्चयाभासी, व्यवहाराभासी, उभयाभासी और सम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टियों के प्रकरण में आया है।

विगत दो हजार वर्षों में नयों पर जो लिखा गया है और जो सम्पूर्ण जिनागम में यत्र-तत्र बिखरा हुआ है; उसका गहराई से अध्ययन कर नयों पर एक ऐसा ग्रन्थ लिखने का भाव आया कि जिसके अध्ययन से सबका सहज समाधान हो जाय।

यह काम मैं पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की उपस्थिति में कर लेना चाहता था।

आत्मधर्म के संपादकीय के रूप में मैंने अप्रैल, 1980 से '**जिनवरस्य नयचक्रम्**' नाम से एक लेखमाला आरम्भ की।

इसके एक वर्ष पहले सन् 1979 ई. श्रावण मास में सोनगढ़ में लगने वाले शिविर में मुझे 'उत्तम कक्षा' लेने का अवसर मिला। इस कक्षा को पहले रामजीभाई लिया करते थे, जो तब अत्यन्त वृद्धावस्था के कारण सम्भव नहीं था। एक वर्ष पहले यह कक्षा आदरणीय लालचन्दभाई ने ली थी; पर अब गुरुदेवश्री की इच्छानुसार यह कक्षा मुझे लेनी थी। काम कठिन तो अवश्य था; पर गुरुदेवश्री की आज्ञा को टालने की बात मैं सोच भी नहीं सकता था।

पूज्य गुरुदेवश्री खुद स्वयं भी उस कक्षा में बैठते थे। श्री रामजीभाई, श्री खीमचन्दभाई, श्री बाबूभाई, श्री हिम्मतभाई आदि सभी बड़े पण्डित भी उस कक्षा में बैठते थे और मैंने वह कक्षा माइल्लधवल के द्रव्यस्वभावप्रकाशक नयचक्र के आधार पर ली थी।

भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित सभी नयचक्र बुला लिये गये थे। सबके हाथ में पुस्तक दी गई थी।

यद्यपि मैं इस महान कार्य को अपना महा सौभाग्य समझ रहा था, बहुत प्रसन्न था; तथापि गुरुदेवश्री और लगभग सभी बड़े विद्वानों की उपस्थिति में कक्षा लेना साधारण काम न था।

तबतक मैं नयचक्र पर 10-10 पेज के सात संपादकीय लिख चुका था। गुरुदेवश्री की छत्रछाया में लगने वाली वह कक्षा बहुत ही सफल रही और पूज्य गुरुदेवश्री तथा सभी बुजुर्ग विद्वानों का भरपूर आशीर्वाद मुझे प्राप्त हुआ।

गुरुदेवश्री तो लगभग सवा साल के भीतर ही चले गये; पर मेरा वह 'परमभावप्रकाशक नयचक्र' लिखा जाता रहा। उसने एक बहुत बड़ा आकार ले लिया, लगभग 500 पेज का हो गया; उसने अपने भीतर सबकुछ नहीं तो, नयों संबंधी बहुत कुछ विषय समाहित कर लिया है।

आज यह परमभावप्रकाशक नयचक्र वर्तमान में चलने वाले सभी जैन महाविद्यालयों में पढ़ाया जाता है। अपने विद्यार्थी विद्वानों में अधिकांश इसके विशेषज्ञ विद्वान हैं। जिनमें पण्डित अभयकुमारजी, पण्डित संजीवजी गोधा और पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील आदि प्रमुख हैं।

समाज में नयों संबंधी जो भी विवाद था, वह अब पूरी तरह समाप्त हो गया है।

उक्त कृति के संदर्भ में वयोवृद्ध व्रती विद्वान ब्र. पण्डित जगन्मोहनलालजी शास्त्री, कटनी वाले लिखते हैं –

''आचार्य अमृतचन्द्र ने नयचक्र को 'अत्यन्तनिशितधारं' कहा है। वर्तमान युग में निश्चय-व्यवहारनय पर चर्चित चर्चा अकुशल हाथों में पड़ गई है; अत: समाज का अंग छिन्न-भिन्न हो गया है। ऐसे दुर्दिनों में आवश्यकता थी कि उस जिनवर के नयचक्र को चलाने का शिक्षण उसके संचालकों को दिया जाये। डॉ. भारिल्ल की यह पुस्तक नयचक्र को चलाने की प्रशिक्षण पुस्तिका है।

यह पुस्तिका नय संबंधी विषयों का तो स्पष्टीकरण करती ही है, पर शंकाशील या गलत उपयोग करनेवाले सज्जनों की शंकाओं का निराकरण करते हुए उन्हें नयों के प्रयोग करने की पद्धति का शिक्षण भी देती है।

जब कोई नयी बीमारी फैलती है तो उसकी औषधि का आविष्कार भी उस युग में किसी विशिष्ट व्यक्ति के द्वारा अवश्य होता है। इस सनातन नियमानुसार वर्तमान जैनसमाज में व्याप्त रोग की यह औषधि है। व्यवहारनय की उपयोगिता तथा उसकी हेयता पर भी विस्तार से इसमें प्रकाश डाला गया है।

डॉ. भारिल्ल कलम के धनी हैं, उनकी बहुमुखी प्रतिभा ने इस कृति में दर्शन दिये हैं। उनको मेरे अनेक धन्यवाद तथा शुभाशीर्वाद हैं। वे ठीक दिशा में बढ़े हैं और बढ़ते जायें – यही भावना है। **विद्वानों की परम्परा की समाप्ति के दुर्दिनों में उनका उदय भविष्य की उज्ज्वलता की आशा दिलाता है।''**

उक्त कृति के संदर्भ में ही सिद्धान्ताचार्य पण्डित कैलाशचन्द्रजी, वाराणसी वाले लिखते हैं –

''डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा लिखित कृति में विषय को बहुत सरल तथा स्पष्टता से समझाया गया है। सब कथन साधार और सप्रमाण हैं। इसे पढ़कर साधारण पाठक और छात्रगण भी लाभान्वित हो सकेंगे।

इससे एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति हुई है। सोनगढ़ पक्ष के आलोचकों को यह पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए।''

उक्त कृति के संदर्भ में ही पण्डित श्री बाबूभाई मेहता लिखते हैं–

''डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की '**परमभावप्रकाशक नयचक्र**' कृति को यदि मध्यस्थ होकर – पक्षपात छोड़कर पढ़ें तो यह विवादरूप अज्ञान मिटाने में अवश्य उपकारी होगी – ऐसा मेरा विश्वास है।

डॉ. भारिल्ल ने अनेक अध्यात्म व आगम ग्रन्थों का तलस्पर्शी अध्ययन कर तथा पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी का प्रत्यक्ष-परिचय व दृष्टि पाकर, जिनागम में प्रतिपादित नयों के रहस्यों को सरल, सुबोध, सुगम, हृदयंगम शैली से सोदाहरण खोलकर व इस ग्रन्थ में एक साथ रखकर आध्यात्म जगत के तत्त्वजिज्ञासु मुमुक्षुसमाज पर बहुत बड़ा उपकार किया है।

नयों का विषय सामान्यत: कठिन और पाण्डित्य पूर्ण होने पर भी इस प्रथम प्रयास से वह जन-जन का विषय बन गया है और बनेगा; क्योंकि यह देशभाषा में इसप्रकार प्रस्तुत किया गया है कि आबाल-गोपाल सभी समझ सकें।

इस कृति की विशेषता यह है कि इसमें आत्महित के लक्ष्य से भेदविज्ञान और वीतरागदशा होने के कारणभूत सर्वनयों के कथन करने का तात्पर्य है – ऐसा निर्देश जगह-जगह पर किया गया है।

आत्महित की भावनावालों को यह कृति पठनीय एवं मननीय है।''

बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल', कोटा लिखते हैं–

''विस्तृत अध्ययन, कठिन परिश्रम, गहरी गवेषणा एवं पैनी प्रज्ञा का प्रसव डॉ. भारिल्ल की अनुपम कृति; नय के चक्र में फंसकर, उससे साफ बच निकलने के लिए काफी पर्याप्त है।''

डॉ. चन्दूभाई टी. कामदार, राजकोट लिखते हैं–

''जिसप्रकार चक्रवर्ती चक्ररत्न के द्वारा प्रतिपक्षियों को पराजित करके छह खण्डों को जीतता है; उसीप्रकार डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने आत्मा को ध्येय बनाकर विविध प्रकार के नयों का सर्वाङ्गीण विवेचन कर इस

'**परमभावप्रकाशक नयचक्र**' ग्रन्थ की रचना की है। यह ग्रंथ अत्यन्त विशद और स्पष्ट है, इसमें अनेक जगह जिनेन्द्र कथित शास्त्रों का आधार दिया गया है।

इससे यह ज्ञात होता है कि इसकी रचना के पूर्व लेखक ने कितनी गहराई से शास्त्रों का अध्ययन किया है, तभी तो ऐसी सुन्दर कृति तैयार हो सकी है। तदर्थ लेखक को अनेकानेक धन्यवाद है।

इस '**नयचक्र**' का जो कोई तत्त्वपिपासु आत्मा सुरुचिपूर्वक अध्ययन करके परिणमन करेंगे, उनकी मोहरूपी बलवान सेना का अवश्य पराभव होगा।

मुझे पूरा विश्वास है कि नयों के सन्दर्भ में यह कृति निश्चितरूप से अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।''

प्रथमानुयोग के अनेक ग्रन्थों के टीकाकार और विद्वत-परिषद् के अनेक वर्षों तक महामंत्री व अध्यक्ष रहने वाले दिग्गज विद्वान डॉ. पन्नालालजी साहित्याचार्य, सागर लिखते हैं –

श्री जिनेन्द्रदेव का नयचक्र वस्तुतः दुरूह है, फिर भी यदि दृष्टि उज्ज्वल है तो उसे सहज ही समझा जा सकता है। पदार्थ जब द्रव्य-पर्यायात्मक अथवा सामान्यविशेषात्मक है, तब उसे कहने के लिए मूलरूप में दो नय द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक स्वीकृत करना आवश्यक है। द्रव्य और पर्याय की विविधरूपता की ओर जब देखते हैं, तब इन्हीं दो नयों के अनेक भेद प्रस्फुटित होने लगते हैं। इन सब नयों को सुलेखक एवं सुवक्ता डॉ. भारिल्लजी ने सरल भाषा में प्रगट किया है। पुस्तक की साज-सज्जा और छपाई आकर्षक है। पुस्तक सर्वत्र समादृत होगी।

डॉ. राजारामजी जैन, एम.ए., पीएच. डी., आरा (बिहार) लिखते हैं –

डॉ. भारिल्लजी की कृति **जिनवरस्य नयचक्रम्** को आद्योपान्त पढ़कर मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि तत्त्वज्ञान के लिए नयज्ञान उसीप्रकार अनिवार्य है, जिसप्रकार भवन-निर्माण के लिए ईंट-पत्थर। मेरे विचार से जैनदर्शन का नय प्रकरण दार्शनिक भाषा-शैली में लिखे जाने के कारण अभी तक प्रायः विद्वद् भोग्य ही बना रहा था, किन्तु अब प्रस्तुत ग्रंथ के सरल भाषा, सरस शैली

तथा दैनिक अनुभवों से समर्थित होने के कारण सर्वोपयोगी बन गया है।

प्रश्नोत्तरी शैली के माध्यम से लेखक ने नयों के विभिन्न पक्षों पर विविध दृष्टिकोणों से प्रकाश डालने का अच्छा प्रयास किया है। सचमुच ही गूढ़ विषय को लोकप्रिय बनाने का यह सफल एवं स्तुत्य प्रयोग है। हृदयाकर्षक लेखन एवं नयनाभिराम प्रकाशन के लिए लेखक एवं प्रकाशक दोनों ही बधाई के पात्र हैं।

डॉ. फूलचन्द प्रेमी, अध्यक्ष – जैनदर्शन विभाग, सं. विश्वविद्यालय, वाराणसी लिखते हैं –

सम्पूर्ण भारतीय दर्शनों के परिप्रेक्ष में जैनदर्शन की स्वतन्त्र व मौलिक देन **नय** जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर बिखरी हुई सामग्री को इकट्ठा कर मौलिकरूप देने का यह प्रथम सफल प्रयास है। इस पुस्तक के माध्यम से अनेक शोध-खोज, तदनुसार विस्तृत अध्ययन के अनेक द्वार उद्घाटित होंगे – ऐसी आशा है ।

प्रसिद्ध विद्वान श्री अगरचंदजी नाहटा, बीकानेर (राज.) लिखते हैं –

नय जैनधर्म की मौलिक विशेषता है। इसके सम्बन्ध में जितना गहन व विशाल साहित्य है, उसे पढ़ने पर भी पूरा बोध नहीं हो पाता। निश्चय एवं व्यवहार को लेकर तो बड़ा विवाद भी है।

डॉ. हुकमचंद भारिल्ल एक सुलझे हुए विचारक एवं अध्ययनशील विद्वान हैं। उनके द्वारा लिखित यह कृति **जिनवरस्य नयचक्रम्** नया प्रकाश डालती है। मुझे आशा है कि यह कई भ्रमों का निराकरण कर सकेगी। मैं उनके इस मूल्यवान ग्रन्थ का हृदय से स्वागत करता हूँ। जिज्ञासुओं से अनुरोध है कि इसे भली-भाँति पढ़कर लाभ उठावें । इसका अधिकाधिक प्रचार वांछनीय है।

श्री नरेन्द्रप्रकाशजी जैन, प्राचार्य – जैन इन्टर कॉलेज, फिरोजाबाद (उ.प्र.) लिखते हैं –

जिनवरस्य नयचक्रम् जैनदर्शन के जिज्ञासुओं के लिए एक उपयोगी

ग्रन्थ है। विद्वान् लेखक ने सरस और सरल शैली में नयों की आवश्यकता और प्रामाणिकता तथा उनके स्वरूप और भेद-प्रभेदों पर सुन्दर प्रकाश डाला है और यह सिद्ध कर दिया है कि जिनेन्द्र भगवान का नयचक्र दुःसाध्य भले ही हो, असाध्य नहीं है। दिन के प्रकाश की तरह यह भी स्पष्ट हुआ है कि **नयचक्र को समझे बिना संसार के दुःखों से बचने का कोई उपाय नहीं है।**

डॉ. भारिल्लजी की इस पुस्तक को पढ़ते समय ऐसा लगता है कि पाठक मानो किसी कुशल शिक्षक की कक्षा में बैठा है और विवेच्य विषय उसके सामने इस तरह प्रस्तुत किया जा रहा है कि उसका कोई भी - पहलू बुद्धिगम्य होने से छूट नहीं पा रहा है। लेखन कला और शैली की ऐसी विशेषता सबकों यों इतनी आसानी से प्राप्त नहीं हो पाती! उसके लिए भी गहन अभ्यास और साधना अपेक्षित है। घिसे-पिटे पौराणिक या शास्त्रीय दृष्टान्तों की जगह व्यवहारिक और दैनिक जीवन में जाने- बूझे कुछ नये और मौलिक उदाहरण प्रस्तुत कर लेखक ने विषय को **बालादपि ग्राह्य** बना दिया है। शतरंज के खिलाड़ी, बादाम, साबुन आदि के उदाहरणों से यह बात प्रमाणित होती है।

विद्वत्-समाज में झगड़ा नयों को लेकर नहीं है। किसी नय-विशेष के विवेचन के समय उसके पीछे निहित अभिप्राय के स्पष्ट न हो पाने की वजह से ही उलझनें खड़ी होती हैं। लोकप्रिय वक्ता और शिक्षक श्री भारिल्लजी ने समयसारादि ग्रन्थों के आधार पर व्यवहारनय की कथंचित् प्रयोजनशीलता और आप्त-मीमांसा आदि के आधार पर, सापेक्ष नय-कथन के सिद्धान्त का स्पष्ट और युक्तिसंगत विवेचन कर, नय- विवाद को सुलझाने की भावना से ही यह पुस्तक लिखी है। यह एक सूझ-बूझभरे विवाद को सुलझाने की भावना से ही यह पुस्तक लिखी है। यह एक सूझ-बूझभरा सम-सामयिक उपयोगी कदम है। श्रम की सार्थकता के लिए लेखक को हमारी भूरिशः बधाइयाँ। आशा है दोनों पक्षों के स्वाध्यायी सज्जन इससे लाभ उठाते हुए अपने दैनन्दिन जीवन-व्यवहार में भी दोनों नयों के सन्तुलन को कोई आकार देने के लिए सदैव सचेष्ट रहेंगे।

पं. उदयचन्द्रजी जैन, अध्यक्ष दर्शनविभाग, विश्वविद्यालय, वाराणसी लिखते हैं –

जिनवरस्य नयचक्रम् पुस्तक का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन कर हृदय-कमल प्रफुल्लित हो गया। डॉ. भारिल्ल जैनदर्शन और जिनागम के मर्मज्ञ विद्वान हैं। इन्होंने जैनागमरूपी समुद्र का मन्थन करके नयरूपी रत्नों को निकाला है और इसे सर्वसाधारण तक पहुँचाया है। प्रत्येक कथन नयसापेक्ष होता है और इसे न समझने के कारण ही अनेक विवाद उत्पन्न हो जाते हैं।

लेखक ने बड़े ही सरल ढंग से नयों का सप्रमाण और सोदाहरण विवेचन करके एक बड़े भारी अभाव की पूर्ति की है। नय विषयक सम्पूर्ण जानकारी को एक ही स्थान में उपलब्ध करा देना यह एक महती उपलब्धि है। इस पुस्तक में नय का स्वरूप, नय के भेद-प्रभेदों आदि का सांगोपांग विवेचन किया गया है। डॉ. साहब एक सिद्धहस्त लेखक हैं और इनकी शैली सरल, सुबोध और रोचक है। साधारण व्यक्ति भी इनकी रचनाओं को आसानी से हृदयंगम कर सकता है।

प्रश्नोत्तरशैली के कारण इस कृति का महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है। जिनवर द्वारा प्रतिपादित नयचक्र के प्रयोग करने में दक्षता प्राप्त करने के लिए यह एक अनूठी रचना है। यद्यपि इस पुस्तक के नाम को देखकर या सुनकर ऐसा भ्रम होता है कि यह रचना संस्कृत में है, फिर भी पुस्तक का नामकरण यथार्थ और मनमोहक है। इसका कारण भारिल्लजी ने **अपनी बात** में लिख ही दिया है।

डॉ. भागचन्द्रजी भास्कर, अध्यक्ष – पाली-प्राकृत विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय लिखते हैं –

''ग्रंथ को आद्योपान्त पढ़ने के बाद यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि डॉ. भारिल्ल ने इसमें निश्चय-व्यवहार नयों का सांगोपांग विवेचन बड़ी तलस्पर्शिता व गंभीरता के साथ किया है। डॉ. भारिल्ल इसके लिए बधाई के पात्र हैं। आध्यात्मिक स्वाध्यायी पिपासुओं के लिए यह ग्रंथ निश्चित ही संग्रहनीय है।''

क्रमशः

छहढाला प्रवचन

13

सिद्धों का स्वरूप

निज माहिं लोक-अलोक गुण-परजाय प्रतिबिम्बित थए,
रहिहैं अनन्तानन्त काल, तथा यथा शिव परिणए।
धनि-धन्य हैं जे जीव, नरभव पाय यह कारज किया,
तिनही अनादि भ्रमण पंच प्रकार तजि वर सुख लिया।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजी कृत छहढाला की छठीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

45 लाख योजन विस्तार वाले सिद्धलोक में अनन्त सिद्ध जीव रहते हैं। प्रत्येक छह माह आठ समय में 608 जीव अर्थात् प्रतिवर्ष 1216 जीव संसार से छूटकर मोक्षपुरी में जाते हैं तो भी वहाँ कभी भीड़ नहीं होती। एक स्थान पर अनन्त जीव रहते हैं तो भी वे एक दूसरे को बाधा पहुँचाए बिना अपने-अपने स्वरूप में अनन्त काल तक अनन्त सुख में लीन रहते हैं, पुनः कभी संसार में नहीं आते।

सिद्ध भगवान के निश्चय से अनन्त गुण हैं अर्थात् उन सबमें शुद्धता प्रकट हो गई है; परन्तु व्यवहार में उनके आठ गुण प्रसिद्ध हैं।

1. क्षायिक सम्यक्त्व 2. अनन्तज्ञान 3. अनन्तदर्शन 4. अनन्तवीर्य
5. अवगाहनत्व 6. अव्याबाधत्व 7. अगुरुलघुत्व 8. सूक्ष्मत्व

सिद्ध भगवान इन सभी गुणों की शुद्धता से सुशोभित हो रहे हैं।

यह असार संसार खारा है अर्थात् दुःखरूप है। खारा शब्द से खारे स्वाद का आशय नहीं है; अपितु राग-द्वेषादि आकुलता का आशय समझना चाहिए। संसार में चैतन्य को मधुर शान्त स्वाद नहीं है, इसलिए नीरस होने से

उसे खारा कहा है। छहढाला में ही कहा भी है –

'सब विधि संसार असारा, यामें सुख नाहिं लगारा'

ऐसे असार और अपार संसार को मुनिराज रत्नत्रय नौका पर बैठकर पार करके मोक्ष में पहुँच गए हैं। **वे मुनिराज धन्य हैं; वे दुःखसमुद्र से पार होकर सुखसमुद्र में लीन हो गए हैं।** आत्मा को ज्ञानार्णव अर्थात् ज्ञान का समुद्र या चैतन्य रत्नाकर कहा जाता है; क्योंकि वह चैतन्य आदि अनन्त रत्नों से भरा है। सिद्ध भगवान उन समस्त गुण-रत्नों को प्रकट करके मोक्षनगरी में अविनाशी चैतन्यरूप से सुशोभित हो रहे हैं। मोक्ष में जीव का या ज्ञान का अभाव नहीं हो जाता, वहाँ तो जीव शुद्ध चैतन्यस्वरूप, अपने अनन्त गुणों सहित शुद्धस्वरूप अस्तित्व में सदाकाल सुशोभित रहता है।

संसार अवस्था में तो जीव का सद्भाव हो, वह अपने सुख-दुःख को स्वतंत्र रूप से भोगे और यदि मुक्त होने पर जीव का अभाव हो जाये तो ऐसे मोक्ष को कौन चाहेगा? ऐसा कौन मूर्ख होगा, जो अपने ही अभाव को चाहे? इसलिए कहा है कि मोक्षदशा में आठों कर्मों का नाश होता है और जीव सम्यक्त्वादि अष्ट महागुणों से सुशोभित होता है। कहा भी है –

हैं अष्टकर्म विनष्ट अष्ट महागुणों से युक्त हैं।
शाश्वत, परम अरु लोक-अग्र विराजमान सुसिद्ध हैं।।

सिद्ध भगवान को जगत में प्रसिद्ध, शाश्वत, महान आनन्द प्रकट हो गया। सिद्ध भगवान भी जगत में प्रसिद्ध हैं। उनकी स्तुति करते हुए मुनिराज कहते हैं – **''हे भगवन! आप सम्यग्ज्ञान रूपी नौका में बैठकर भव समुद्र को पार करके शाश्वत सिद्धपुर में पहुँच गए हैं। हे प्रभो! मैं भी आपके मार्ग पर चलकर शाश्वतपुरी में आ रहा हूँ, क्योंकि इस लोक में उत्तम पुरुषों को अन्य कोई शरण नहीं है।''**

अहो! भव्य जीव वीतराग-विज्ञान द्वारा संसार दुःखों से छूटकर सिद्ध सुख को प्राप्त करते हैं। कहाँ निगोद के दुःख और कहाँ सिद्धों का सुख?

मुनिराज वीतराग-विज्ञानरूपी नौका पर चढ़कर संसार के दुःख-समुद्र को पार करके मुक्तिपुरी में पहुँच गए हैं। **रत्नत्रयरूप परिणमित जीव ही वास्तव में उत्तम तीर्थ है;** क्योंकि वह रत्नत्रय नौका पर चढ़कर भवसमुद्र से पार हो जाता है। **पर्वत आदि तो उपचार से (स्थापना निक्षेप से) तीर्थ हैं तथा रत्नत्रययुक्त जीव भावनिक्षेप से तीर्थ है।**

शास्त्रों में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, भेदविज्ञान, वीतराग-विज्ञान तथा रत्नत्रय आदि को नौका की उपमा दी गई है, उनमें बैठनेवाला अर्थात् उन भावों को प्रकट करनेवाला जीव संसारसागर पार करके मोक्षनगरी में अवश्य पहुँच जाता है। आचार्य अमृतचन्द्र कुन्दकुन्दस्वामी के लिए अत्यन्त बहुमानपूर्वक **आसन्नसंसारपारावारपार...** लिखते हैं। अर्थात् उनके संसार समुद्र का किनारा अत्यन्त निकट आ गया है। देखो! वीतराग-मार्ग में मुनियों का स्वरूप! अरे!! जहाँ आत्मा का अनुभव हुआ, वहाँ अव्रत सम्यग्दृष्टि को भी संसार का किनारा समीप आ गया है। मुनियों को तो संसार का किनारा अत्यन्त निकट है और अरहन्त तो केवलज्ञान प्रकट करके मोक्षपुरी में पहुँच गये हैं, अब वे **'सादि अनन्त अनन्त समाधि सुख में'** लीन रहेंगे। अनन्त काल तक उस सुख का वेदन करते रहने पर भी थकान नहीं होती। थकान तो मोह में होती है। जहाँ मोह नहीं, वहाँ थकान कैसी?

प्रवचनसार में कहा है – ''अतीन्द्रिय सुख में लीन केवली भगवान को मात्र परिणमन के कारण अर्थात् लोकालोक को जानने के कारण कोई थकान या खेद नहीं होता। थकान तो मोह अर्थात् कषायरूप परिणमन में होती है, ज्ञानरूप परिणमन में खेद या थकान कैसी? यह तो स्वाभाविक क्षायिकी क्रिया है।'' **अरे! वहाँ तो कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि अरहन्त भगवन्तों की वाणी, विहार आदि क्रियायें यद्यपि कर्मोदय से होने के कारण औदयिकी हैं; परन्तु मोहरहित होने से वे क्रियायें विकार का और नवीन कर्मबन्ध का कारण नहीं होतीं, अपितु पुराना कर्म क्षय होता जाता है। अतः औदयिकी क्रियाओं को क्षायिकी ही क्यों न माना जाए?**

देखो! यह क्षायिक चैतन्यभाव की महिमा! उसके जोर में औदयिकी क्रियाओं को भी क्षायिकी कहा जाता है।

चैतन्यभाव और रागादि उदयभावों के भेदज्ञान द्वारा केवलज्ञान की साधना करनेवालों को ही केवली भगवान द्वारा कही गई यह बात समझ में आती है। तीर्थंकरों को विहार, दिव्यध्वनि आदि क्रियायें होने पर भी प्रतिक्षण उनके पूर्व कर्मों का क्षय होता जाता है। जहाँ मोह नहीं है, वहाँ चैतन्य में विकार कैसा? और जहाँ विकार नहीं, वहाँ बन्धन कैसा? धर्मी जीव को चतुर्थ गुणस्थान में भी अबन्धस्वरूप चैतन्यस्वभाव का अंश वर्तता है और उसके बल से वह उदयभावों से भिन्न आत्मा को साधता है और फिर चैतन्य के अनुभव के बल से आगे बढ़कर, मुनि होकर मोह का सर्वथा छेदन कर केवलज्ञान प्रकट कर परमात्मा होकर मोक्षपुरी में जाता है। **धन्य हैं वे जीव ! जिन्होंने यह उत्तम कार्य किया।**

क्रमशः

प्रवचन के मध्य में आए उद्धरण की मूल गाथाएँ...

1) नियमसार : गाथा क्रमाक - 72

णट्ठट्ठकम्मबंधा अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा।
लोयग्गठिदा णिच्चा सिद्धा ते एरिसा होंति।।

2) तत्त्वप्रदीपिका (प्रवचनसार, गाथा - 1 की टीका की उत्थानिका)

"अथ खलु कश्चिदासन्नसंसारपारावारपारः..."

3) प्रवचनसार : गाथा क्रमाक - 60, 44-45

जं केवलं ति णाणं तं सोक्खं परिणमं च सो चेव।
खेदो तस्स ण भणिदो जम्हा घादी खयं जादा।।

ठाणणिसेज्जविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसिं।
अरहंताणं काले मायाचारो व्व इत्थीणं।।
पुण्णफला अरहंता तेसिं किरिया पुणो हि ओदइया।
मोहादीहिं विरहिदा तम्हा सा खाइग त्ति मदा।।

नियमसार प्रवचन –

निश्चय प्रत्याख्यान

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थ प्रतिक्रमणाधिकार की गाथा 105 पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूलत: गाथा इसप्रकार है –

णिक्कसायस्स दांतस्स सूरस्स ववसायिणो।
संसारभयभीदस्स पच्चक्खाणं सुहं हवे।।105।।

(हरिगीत)

जो निष्कषायी दान्त है, भयभीत है संसार से।
व्यवसाययुत उस शूर को, सुखमयी प्रत्याख्यान है।।105।।

अन्वयार्थ :– जो निष्कषाय है, दांत (इन्द्रियों का दमन करनेवाला) है, शूरवीर है, व्यवसायी (शुद्धता के प्रति उद्यमवन्त) है और संसार से भयभीत है; उसे सुखमय प्रत्याख्यान अर्थात् निश्चय प्रत्याख्यान होता है।

(गतांक से आगे...)

टीका : जो जीव निश्चय प्रत्याख्यान के योग्य हो, ऐसे जीव के स्वरूप का यह कथन है। जो समस्त कषायकलंकरूप कीचड़ से विमुक्त है, सर्व इन्द्रियों के व्यापार पर विजय प्राप्त कर लेने से जिसने परम दान्तरूपता प्राप्त की है, सकल परिषहरूपी महासुभटों को जीत लेने से जिसने निज शूर गुण प्राप्त किया है, निश्चय-परम-तपश्चरण में निरत ऐसा शुद्धभाव जिसे वर्तता है तथा जो संसार-दु:ख से भयभीत है, उसे व्यवहार से चार आहार के त्यागरूप प्रत्याख्यान है; परन्तु व्यवहार-प्रत्याख्यान तो कुदृष्टि पुरुष को भी चारित्रमोह के उदय के हेतुभूत द्रव्यकर्म के और भावकर्म के क्षयोपशम द्वारा क्वचित् कदाचित् संभवित है। इसीलिये निश्चय-प्रत्याख्यान अति-आसन्नभव्य जीवों को हितरूप है; क्योंकि जिसप्रकार सुवर्णपाषाण (जिस पाषण का वर्ण सुवर्ण हो) नामक पाषाण उपादेय है, उसीप्रकार अन्धपाषाण

(जिस पाषण में सुवर्ण न हो) नहीं है। इसलिये संसार तथा शरीर सम्बन्धी भोग की निर्वेगता निश्चय प्रत्याख्यान का कारण है और भविष्य काल में होनेवाले समस्त मोह-राग-द्वेषादि विविध विभावों का परिहार वह परमार्थ प्रत्याख्यान है अथवा अनागत काल में उत्पन्न होनेवाले विविध अन्तर्जल्पों का परित्याग वह शुद्ध निश्चय प्रत्याख्यान है।

गाथा 105 पर प्रवचन

निश्चय प्रत्याख्यान के योग्य जीव के स्वरूप का यह कथन है। जो जीव समस्त कषायकलंकरूप कीचड़ से विमुक्त है, उसे सच्चा प्रत्याख्यान होता है।

कषाय अर्थात् क्रोधादिभाव; जिस भाव से भटकने का लाभ मिले, उसे कषाय कहते हैं। जो जीव कषायरूपी कलंक से विमुक्त है और अन्दर शान्त स्वभाव में एकाग्रता करता है, उसी को सच्चा प्रत्याख्यान होता है। संसार सरिता है, उसमें क्रोधादि कीचड़ है; उसका आश्रय लेनेवाला जीव तो उसी में धस जाता है। इसलिये जो जीव स्वभाव को पहिचान कर समस्त कषाय कादव (पंक) से रहित है, वही निःकषाय है।

जिसने समस्त इन्द्रियों के व्यापार पर विजय प्राप्त करके परमदान्तरूपता प्राप्त की है, उसको विकार का अभाव होकर सच्चा प्रत्याख्यान होता है। इन्द्रियों का व्यापार छोड़ा है अर्थात् इन्द्रियों का व्यापार मेरे स्वभाव में नहीं है, इन्द्रियों का लक्ष्य करना मेरा स्वरूप नहीं है – इसप्रकार निर्णयपूर्वक इन्द्रियों का व्यापार छोड़ा है और अपने लक्ष्य को पर की तरफ से संकुचित कर जो स्वभाव में एकाग्र हुआ है, उसको दान्त कहते हैं।

सकल परीषहरूपी-महासुभटों को जीतकर जिसने निज शूर गुण प्राप्त किया है, उसे सच्चा प्रत्याख्यान होता है। महा निर्ग्रन्थ मुनिवर आत्मस्वरूप में लीन हों, क्षण-क्षण में छठे-सातवें गुणस्थान में झूलते हों – ऐसे मुनि को कोई द्वेषी मारे, निन्दा करे अथवा स्त्री का परीषह आवे, सिंह-बाघ आदि वन्य पशुओं का परीषह आ पड़े; तो उन सभी घोर परीषहों को उन्होंने शान्त, उपशम भाव में सहज लीनता द्वारा जीता है। अतः उन्होंने निज शूर गुण प्राप्त किया है – ऐसा कहा।

निश्चय-परमतपश्चरण में निरत ऐसा शुद्धभाव जिसको वर्तता है, वह ज्ञानस्वभाव मौन है। पुण्य-पाप का कोलाहल उसका स्वभाव नहीं है। – ऐसे ज्ञानस्वभाव के मौनपने में जो निरत रहते हैं, उनको शुद्धभाव होता है। ऐसे शुद्धभाव में जो जीव वर्तते हैं, व्यापार करते हैं; उन्हें व्यवसायी अर्थात् शुद्धता के प्रति उद्यमवंत कहते हैं। मुनिराज का एकसमय भी अन्तरंग शुद्धतारूप व्यवसाय के बिना नहीं बीतता – शुद्धता का उद्यम करना उनका धन्धा है, उनका उस धन्धे बिना एक समय भी नहीं जाता। अज्ञानी मिथ्यादृष्टि को राग-द्वेष का व्यवसाय होता है, जबकि धर्मी, ज्ञानी को राग-द्वेषरहित स्वभाव का व्यवसाय निरन्तर होता रहता है।

जो संसार दुःख से भयभीत है, उसे यथोचित शुद्धतासहित व्यवहार से चारों आहार के त्यागरूप प्रत्याख्यान है। जिसको पुण्य-पाप आदि विकार की रुचि नहीं है, जिसे संसार से भय वर्तता है, जिसे भव और भव के कारणभूत मिथ्यात्व-अज्ञान तथा पुण्य-पाप के भाव विषतुल्य लगते हैं – ऐसे आत्मज्ञानी सन्तों को अन्तर रमणता, अन्तर स्थिरतास्वरूप चारित्र और प्रत्याख्यान वर्तता है। मुनिराज समझते हैं कि अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनों ओर का झुकाव दुःख है, इसलिये उन्हें संयोगीभाव से भयभीतपना वर्तता है और स्वभाव में श्रद्धा-ज्ञान तथा अन्तर स्थिरता करके परम निर्भयपना वर्तता है। ऐसी आत्मरमणता में झूलते मुनिराज को व्यवहार से चार प्रकार के आहार के त्यागरूप प्रत्याख्यान है। मुनिराज आहार के निमित्त नगर में जाते हैं और वहाँ भक्तजन भक्तिपूर्वक आहार देते हैं। आहार के पश्चात् मुनिराज वहीं के वहीं तुरन्त ही चौबीस घंटे के लिए आहार का प्रत्याख्यान करते हैं अर्थात् आहार संबंधी विकल्प को छोड़ देते हैं – ऐसी उनकी सहज दशा है।

शुद्धतारहित व्यवहारप्रत्याख्यान तो कुदृष्टि-मिथ्यात्वी पुरुषों को भी चारित्रमोह के उदय के हेतुभूत द्रव्यकर्म-भावकर्म के क्षयोपशम द्वारा क्वचित् कदाचित् संभवित है। अज्ञानी के भी पुण्य के भावरूप प्रत्याख्यान का परिणाम होता है; परन्तु वह सच्चा प्रत्याख्यान नहीं है। मिथ्यादृष्टि को कषाय की किंचित् मंदता होने पर पुण्यभाव होता है। अतः उसे स्वर्ग मिलता है, पुण्य फलता है; तथापि उससे आत्मा का कल्याण तो रंचमात्र भी नहीं होता।

क्रमशः

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

उत्पादव्ययध्रुवत्व शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

गतांक से आगे...

क्रमाक्रमवृत्तवृत्तित्वलक्षणा उत्पादव्ययध्रुवत्वशक्तिः।

आहाहा...! आत्मा शाश्वत सत् वस्तु है, उसमें रहनेवाली शक्तियाँ भी त्रिकाल शाश्वत एवं पारिणामिकभावरूप हैं। एक शक्ति दूसरी अनन्त शक्तियों में निमित्त तो है; परन्तु वह अन्य शक्तियों को उत्पन्न नहीं करती है। प्रत्येक शक्ति में क्रमवर्ती-अक्रमवर्तीरूप उत्पाद-व्यय-ध्रुवत्व का रूप है। जिस समय ज्ञान की पर्याय का निर्मलपने क्रमवर्ती उत्पाद होता है, वह ज्ञान गुण के क्रमवर्ती-अक्रमवर्तीरूप उत्पाद-व्यय ध्रुवत्व का रूप है। वह ज्ञान गुण के क्रमवर्ती-अक्रमवर्तीपने का स्वभाव है। उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य उसमें निमित्त है।

आहाहा...! एक-एक शक्ति में ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य, स्वच्छता, प्रभुता इत्यादि में उत्पाद-व्ययरूप से जो पर्याय समय-समय में होती है, वह पर की अपेक्षा के बिना ही, स्वयं के षट्कारक से होती है। ऐसा ही द्रव्य का उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य स्वभाव है। इसप्रकार ज्ञान में मतिज्ञान, श्रुतज्ञान अथवा केवलज्ञान की पर्याय का जो क्रमवर्ती उत्पाद होता है; वह इस उत्पादव्ययध्रुवत्व शक्ति के कारण होता है - ऐसी सूक्ष्म बात है बापू!

प्रश्न - चार घातिकर्मों के क्षय से केवलज्ञान उत्पन्न होता है - तत्त्वार्थसूत्र में भी ऐसा कहा है, फिर पर्यायें पर निरपेक्ष और स्वयं के षट्कारक से होती हैं, यह बात कहाँ रही?

उत्तर - हाँ, वहाँ जो कहा है वह निमित्त का कथन है। अर्थात् केवलज्ञान होने के समय बाह्य निमित्त कौन होता है, इसका ज्ञान कराया है। वास्तव में

तो ज्ञानगुण में उत्पादव्ययध्रुवत्व शक्ति का रूप है, जिससे ज्ञान की केवलज्ञानरूप पर्याय उस काल में स्वयं से ही प्रगट होती है। कर्म का क्षय बाह्य निमित्त है; परन्तु कर्म की अथवा किसी भी दूसरे पदार्थ की उसमें अपेक्षा नहीं है, ऐसा ही वस्तुस्वरूप है।

स्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षा में ऐसा कहा है कि पूर्वपर्याययुक्त द्रव्य कारण है और उत्तरपर्याययुक्त द्रव्य उसका कार्य है। जैनतत्त्वमीमांसा में पण्डित श्री फूलचन्दजी ने भी यह बात लिखी है। परन्तु वहाँ तो द्रव्य की पूर्वपर्याय का ज्ञान कराया है। यहाँ उस बात को व्यवहार कथन जानकर गौण किया है। भाई! उत्पादव्ययध्रुवत्व वस्तु का स्वभाव है। द्रव्य की एक-एक पर्याय में सहज स्वतंत्र उत्पाद-व्यय समय-समय में होता है। आहाहा...! बाह्य निमित्त के कारण से पर्याय का उत्पाद होता है - ऐसी होनेवाली **पर्याय स्वयं ही अपने उत्पाद का वास्तविक कारण है।** अपने क्रम में प्रगट व्रतादि व्यवहार को और पूर्व पर्याय को कारण कहना तो व्यवहारमात्र है तथा वर्तमान एक गुण की पर्याय, दूसरे गुण की पर्याय का वास्तविक कारण नहीं है। **सम्यग्दर्शन के कारण से सम्यग्ज्ञान होता है - ऐसा नहीं है। कहीं कहा भी हो तो उस कथन की यथार्थ अपेक्षा समझनी चाहिए।**

भगवान आत्मा, त्रिकाली ध्रुव, ध्रुव और ध्रुव है और उसकी एक-एक शक्ति भी ध्रुव है। उस शक्ति और शक्तिवान द्रव्य के भेद का लक्ष्य छोड़कर अभेद की दृष्टि करने से, अभेद शुद्ध चैतन्य के तल में स्पर्श करने से अर्थात् ध्रुव के सन्मुख होकर परिणमने से निर्मलपर्याय का सहज ही अपने कारण से उत्पाद होता है। तब पूर्व पर्याय का व्यय भी स्वयं से स्वतंत्र होता है। कोई किसी का कारण नहीं है। द्रव्य-गुण ध्रुव-एकरूप सदृश रहते हैं। वे भी स्वयं से ही होते हैं। अहो! ऐसा ही अलौकिक वस्तुस्वरूप है। भाई! साधक को अशुभ से बचने के लिए जो शुभराग आता है, वह व्यवहार है; परन्तु वह निर्मल पर्याय को उत्पन्न नहीं कर सकता और पूर्व पर्याय भी उस निर्मल पर्याय की वास्तविक कारण नहीं है। यह सब सूक्ष्म लगता है, फिर भी जानना तो पड़ेगा ही। इस जगत के हीरा, माणिक, मोती, बाग, बंगला, बगीचा, स्त्री, पुत्र, परिवार और रूपवान शरीर आदि सब दूसरी चीज पर हैं। इनको जानने पर

कभी सुख नहीं होता; क्योंकि इनमें सुख नहीं है। स्व-सन्मुख होकर निज स्वरूप को जानने पर सुख होता है; क्योंकि उसमें सुख है।

'निमित्त से उपादान का कार्य नहीं होता, व्यवहार से निश्चय नहीं होता और पर्यायें क्रमनियमित हैं; इन विषयों पर वर्तमान में बहुत विवाद हो रहा है। अरे भाई! इन विषयों का यथार्थ स्वरूप समझकर विरोध मिटाना चाहिए।

पंचास्तिकाय की गाथा 155 में नियत-अनियत की बात आयी है। इस गाथा में स्वसमय और परसमय की व्याख्या की गई है। वहाँ स्वभावलीन परिणमन को नियत कहा है और विभाव परिणमन को अनियत कहा है। **अनियत का यह अर्थ नहीं है कि परिणाम क्रमनियमित न होकर आगे-पीछे किए जा सकते हैं; बल्कि अनियत अर्थात् स्वभाव में अनवस्थित। स्वभाव में लीन न होनेवाली विभावपर्याय ही वहाँ अनियत का अर्थ है।**

प्रवचनसार में 47 नयों का अधिकार है। वे 47 धर्म आत्मा में एक ही साथ हैं। वहाँ भी कालनय और अकालनय ये दो नय कहे हैं। ''**आत्मद्रव्य कालनय से गर्मी के दिनों के अनुसार पकनेवाले आम्रफल के समान समय पर आधार रखनेवाली सिद्धिवाला है और अकालनय से कृत्रिम गर्मी से पकाये गये आम्रफल के समान समय पर आधार नहीं रखनेवाली सिद्धिवाला है।**''

प्रश्न – यहाँ अकाल का अर्थ 'पर्याय क्रम-अनियत अर्थात् आगे-पीछे होती है' – क्या ऐसा है?

उत्तर – पर्याय तो क्रमनियमित स्वकाल में ही उत्पन्न होती है; परन्तु साथ में स्वभाव और पुरुषार्थ होता है, उसे बताने के लिए वहाँ अकालनय की बात की है। वस्तुतः एक ही पर्याय एकसाथ कालनय और अकालनय का विषय होती है। जब काल को गौण करके पुरुषार्थ और स्वभाव की विवक्षा होती है, तब वह अकालनय का विषय होती है। इसप्रकार कोई पर्याय आगे-पीछे होती है - ऐसा वहाँ अभिप्राय ही नहीं है। वास्तव में प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध स्वकाल में ही उत्पन्न होती है।

आहाहा...! जिसप्रकार द्रव्य के सभी गुण एकसाथ द्रव्य में त्रिकाल सर्वप्रदेशों में व्यापक हैं, उनमें कभी हानि-वृद्धि नहीं होती; उसीप्रकार द्रव्य के अनादि-अनन्त प्रवाहक्रम में तीनों काल की प्रतिसमय प्रगट होनेवाली

पर्याय का स्वकाल नियत है। भाई! तीनों काल की प्रतिसमय प्रगट होनेवाली प्रत्येक पर्याय का स्वकाल नियत है। भाई! तीनों काल की पर्यायों का प्रवाह द्रव्य में नियत है। पर्यायों की क्रमनियमित धारा में कभी भंग नहीं पड़ता। **आहाहा...! ऐसा क्रम-अक्रमवर्तीपना द्रव्य का स्वभाव है।**

यहाँ कोई कहता है कि क्रमवर्तीपना अर्थात् पर्यायें एक के बाद एक होती हैं; परन्तु क्रम से प्रगट होनेवाली अमुक पर्याय निश्चित होती है - ऐसा नहीं है; परन्तु यह मान्यता ठीक नहीं है। क्रमवर्तीपने का अर्थ मात्र इतना नहीं है कि प्रवाहक्रम में किसी समय में कोई पर्याय होती है, परन्तु वह पर्याय भी नियत-निश्चित है। जिसप्रकार सोमवार आदि सात दिन निश्चित क्रमबद्ध हैं।

समयसार, सर्वविशुद्धज्ञान अधिकार की गाथा 308 से 311 की टीका में आचार्यदेव ने यह बात अच्छी तरह से स्पष्ट की है। जीव और अजीव सभी द्रव्य स्वयं के क्रमनियमित परिणामों से उत्पन्न होते हैं। क्रमनियमित कहो अथवा क्रमबद्ध कहो, एक ही बात है। भाई! ध्रुव रहकर क्रमनियमित भाव से परिणमन करना, प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है। सम्पूर्ण द्रव्य ही ऐसा है। **आहाहा...! द्रव्य के ऐसे क्रम-अक्रमवर्तीपने के स्वभाव को यथार्थ जान ले तो पर्याय उल्टी-सीधी, आगे-पीछे होती है, निमित्त से होती है और निमित्त से बदल सकती है - ऐसी विपरीत दृष्टि मिट जाती है और उसे स्वसन्मुख दृष्टि द्वारा निर्मल परिणमने की धारा प्रारंभ हो जाती है।** इसप्रकार द्रव्य में होनेवाली पर्यायें स्वकाल में क्रमबद्ध प्रगट होती हैं - ऐसे निर्णय के जोर से स्वद्रव्य मिलता है। शुद्ध एक ज्ञायक स्वभाव के प्रति उपयोग झुकता है और उसमें निर्मल परिणमन की क्रमवर्ती धारा उल्लसित होती है, यही धर्म है।

क्रमशः

जैन शास्त्र, भक्ति गीत, तीर्थ दर्शन तथा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये vitragvani app आज ही Download करें या Visit करें - www.vitragvani.com
विविध चित्रों के लिए Visit करें - www.gurukahanartmusuem.org
Daily updates :- FB-/vitragvani YT-c/ vitragvani Telegram
संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

गतांक से आगे...

प्रश्न : जब स्वाश्रय करे, तब सम्यग्दर्शन प्रगट होता है अथवा जब सम्यग्दर्शन हो, तब स्वाश्रय प्रगट होता है ?

उत्तर : जिस पर्याय ने स्वाश्रय किया, वह स्वयं ही सम्यग्दर्शन है; अत: उसमें पहले-पीछे का भेद ही नहीं है। जो पर्याय स्वाश्रय में ढली, वही सम्यग्दर्शन है। स्वाश्रित पर्याय और सम्यग्दर्शन भिन्न-भिन्न नहीं हैं। त्रिकाली स्वभावाश्रित ही मोक्षमार्ग है।

प्रश्न : आपश्री के द्वारा बताया गया आत्मा का माहात्म्य आने पर भी कार्य क्यों नहीं होता ?

उत्तर : अन्दर जो अपूर्व माहात्म्य आना चाहिए, वह नहीं आता। एकदम उल्लसित होकर अन्दर से जो महिमा आनी चाहिए, वह नहीं आती। भले धारणा में माहात्म्य आता हो।

प्रश्न : वास्तविक माहात्म्य लाने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर : एक आत्मा की ही यथार्थ में अन्दर से रुचि जगे और भव के भावों की थकान लगे तो आत्मा का अन्दर से माहात्म्य आये बिना रहता ही नहीं। वास्तव में जिसे आत्मा ही चाहिए, उसको आत्मा मिलता ही है। श्रीमद् ने भी कहा है - **'छूटने का इच्छुक बँधता नहीं है'।**

प्रश्न : उपयोग में उपयोग है - इसका क्या मतलब ?

उत्तर : उपयोग में उपयोग अर्थात् सम्यग्दर्शन की निर्विकल्प परिणति में उपयोग अर्थात् त्रैकालिक आत्मा आता है। आत्मा तो आत्मारूप-उदासीनरूप में विद्यमान है, निर्विकल्प होने पर शुद्धोपयोग में त्रैकालिक उपयोगस्वरूप आत्मा जाना जाता है।

प्रश्न : विकल्पसहित निर्णय करना सामान्य श्रद्धा और निर्विकल्प अनुभव करना विशेष श्रद्धा – क्या यह ठीक है ?

उत्तर : नहीं, **श्रद्धा में सामान्य-विशेष का भेद है ही नहीं।** अखण्ड आत्मा की निर्विकल्प अनुभवसहित प्रतीति करना ही सम्यग्दर्शन है। इस सम्यग्दर्शन करने वाले जीव को प्रथम 'आत्मा ज्ञानस्वरूप है'- ऐसा विकल्पसहित निर्णय होता है, तत्पश्चात् जब निर्विकल्प अनुभव करता है तब पहले के विकल्पसहित किये गये निर्णय को व्यवहार कहा जाता है।

प्रश्न : स्वानुभव करने के लिए छह मास अभ्यास करना बताया – वह अभ्यास क्या करना ?

उत्तर : राग मैं नहीं, ज्ञायक मैं हूँ – इसप्रकार ज्ञायक की दृढता जिसमें हो, वैसा बारम्बार अभ्यास करना।

प्रश्न : आत्मा की रुचि हो और सम्यग्दर्शन न हो सके तो अग्रिम भव में होगा क्या ?

उत्तर : आत्मा की सच्ची रुचि हो, उसे सम्यग्दर्शन होगा ही, अवश्य होगा। यथार्थ रुचि और लक्ष्य होने पर सम्यग्दर्शन न हो, यह तीन काल में नहीं हो सकता। वीर्य में हीनता नहीं होनी चाहिए, वीर्य में उत्साह और नि:शंकता होनी चाहिए। कार्य होगा ही – इसप्रकार हमारे निर्णय में आना चाहिए।

प्रश्न : धारणाज्ञान में यथार्थ जाने तो सम्यक्सन्मुखता कही जाय या नहीं ?

उत्तर : धारणाज्ञान में दृढसंस्कार अपूर्व रीति से डाले, पहले कभी नहीं डाले हों – ऐसे अपूर्व रीति से संस्कार डाले जावें तो सम्यक्सन्मुखता कही जाय।

प्रश्न : अन्तर में उतरने के लिए सच्ची रुचि की आवश्यकता है या कोई अन्य भूल है, जिसके कारण अन्तर में नहीं उतर पाता ?

उत्तर : अन्तर में उतरने के लिए सच्ची रुचि की आवश्यकता है; किन्तु इस रुचि के सम्बन्ध में अन्य कोई क्या कह सकता है, स्वयं से ही निर्णय होना चाहिए। सच्ची रुचि हो तो आगे बढता जाय और अपना कार्य कर ले। **क्रमशः**

समाचार दर्शन

श्री टोडरमल महाविद्यालय में नवीन सत्र का शुभारम्भ..

एक मुलाकात नवपल्लवों के साथ

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के 47वें बैच के नवागन्तुक विद्यार्थियों का परिचय सम्मेलन 16 जुलाई 2023 को '**नवपल्लव**' के रूप में हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुआ।

तीन सत्रों में आयोजित इस समारोह के प्रथम सत्र के अध्यक्ष श्री सुशीलकुमार गोदिका जयपुर (अध्यक्ष), द्वितीय सत्र के अध्यक्ष श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर (महामंत्री) व तृतीय सत्र के अध्यक्ष डॉ. शान्तिकुमार पाटील, जयपुर (प्राचार्य) थे।

इस सम्मेलन में विद्यार्थियों को उपरोक्त तीनों अध्यक्षों के साथ श्रीमती कमला भारिल्ल, श्रीमती गुणमाला भारिल्ल, पण्डित पीयूष शास्त्री, पण्डित अनेकान्त शास्त्री भारिल्ल, पण्डित जिनकुमार शास्त्री, पण्डित ऋषभ शास्त्री, पण्डित अमन शास्त्री का उद्बोधन स्वरूप मंगल आशीष प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त श्री ताराचंद सोगानी, जयपुर; श्री हीराचंद बैद, जयपुर; डॉ. प्रमोद शास्त्री, शाहगढ़; पण्डित संजय सेठी, जयपुर; श्री अश्वनी जैन, दिल्ली; श्री अखिल जैन, USA; पण्डित श्रीमन्त नेज, जयपुर; श्रीमती नीलिमा पाटनी, जयपुर; पण्डित संयम शास्त्री, नागपुर; पण्डित गौरव शास्त्री, जयपुर एवं महाविद्यालय के सभी अध्यापकगण उपस्थित रहे।

इस अवसर पर उपाध्याय कनिष्ठ के नवागन्तुक 40 छात्रों ने तत्त्वप्रचार की भावना व्यक्त करते हुए अपना परिचय दिया। साथ ही शेष 4 कक्षा के 4-4 छात्रों ने आकर अपनी कक्षा के प्रत्येक छात्र का परिचय देते हुए उनकी उपलब्धियों से परिचित कराया। साथ ही स्मारक एवं जयपुर में रह रहे स्नातकों का परिचय पण्डित नयन शास्त्री, बरायठा ने दिया। इसी बीच उपाध्याय वरिष्ठ से वंशित जैन, कोटा ने नवपल्लवों के लिए प्रेरणा स्वरूप कविता प्रस्तुत की।

कार्यक्रम में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के बहुत ही मार्मिक उद्बोधन का वीडियो प्रसारित किया गया, जिसमें उन्होंने इस तत्त्वज्ञान के मार्ग में प्रविष्ट हुए समस्त छात्रों को अत्यन्त सौभाग्यशाली बताया। साथ ही अत्यधिक उज्जवल भावना के साथ अध्ययन की प्रेरणा दी। दादा की अनुपस्थिति में उक्त वीडियो उद्बोधन को सुनकर सभी गद्गद् हुए।

सम्पूर्ण कार्यक्रम महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. शान्तिकुमार पाटील के निर्देशन में सहज जैन, छिंदवाड़ा; उत्सव जैन, बक्स्वाहा; कपिल जैन, बम्होरी; अरिहन्त किणिकर, कवठेसार एवं समस्त शास्त्री तृतीय वर्ष के सहयोग से हुआ तथा मंगलाचरण शाश्वत जैन, सागर; सोहम बालिकाई, कुंभोज; एकाग्र जैन, पिडावा ने किया।

महाविद्यालय में आयोजित विशेष गतिविधियों के क्रम में...

ग्रीष्मकालीन अवकाश में विशेष प्रभावना

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में 09 जुलाई 23 को अनुभव-गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसमें विद्यार्थियों ने अपने अनुभव सभी के साथ साझा किया।

गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. नेमचन्द शास्त्री, खतौली ने की। मुख्य अतिथि के रूप में पण्डित श्रीमन्त शास्त्री, नेज एवं पण्डित ऋषभ शास्त्री, दिल्ली उपस्थित रहे।

गोष्ठी में 11 वक्ताओं ने बताया कि उन्होंने किसप्रकार महाविद्यालय के ग्रीष्मकालीन अवकाश के दौरान देशभर के विभिन्न स्थानों में जाकर तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार किया तथा किसी भी प्रकार की सुविधाओं की अपेक्षा न रखते हुए पवित्र भावना से प्रभावना का ये सुन्दर व अनुकरणीय कार्य किया। महाविद्यालय के लगभग 70 विद्यार्थियों ने शिविरों में भाग लेकर विशेष प्रभावना की।

गोष्ठी का संचालन मोहित जैन, फुटेरा व अमन जैन, अलवर तथा मंगलाचरण सहज जैन, छिंदवाड़ा ने किया। आभार-प्रदर्शन अविरल जैन, खनियांधाना ने किया।

''हम और हमारा महाविद्यालय''

इसी शृंखला में 09 जुलाई को ही रात्रि में साप्ताहिक विचार गोष्ठियों की शृंखला का उद्घाटन '**हम और हमारा महाविद्यालय**' विषय पर आधारित एक विशेष गोष्ठी के साथ किया गया, जिसमें विद्यार्थियों ने महाविद्यालय के उद्भव से लेकर वर्तमान परिस्थितियों तक के सफर को विविध दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया।

गोष्ठी की अध्यक्षता श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर ने की। मंचासीन अतिथियों में श्रीमती कमला भारिल्ल; श्रीमती गुणमाला भारिल्ल; पण्डित अमन शास्त्री; पण्डित संयम शास्त्री, नागपुर आदि महाविद्यालय के सभी अध्यापकगण उपस्थित थे।

संचालन मयंक जैन, फुटेरा एवं सौरभ जैन, बिलाई एवं मंगलाचरण राहुल जैन, अमायन ने किया। आभार-प्रदर्शन पण्डित जिनकुमार शास्त्री ने किया।

''णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन''

इसी क्रम में दिनांक 15 जुलाई 2023 को रात्रि में '**णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यार्थियों ने णमोकार महामंत्र के स्वरूप एवं माहात्म्य को विविध दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया।

गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित संजय सेठी, जयपुर ने की। संचालन मानस जैन, बांसवाड़ा व शशांक जैन, सागर तथा मंगलाचरण ध्रुव महाजन, हिंगोली ने किया।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से संयम जैन, बांसा एवं शास्त्री वर्ग संयम जैन, फरीदाबाद चुने गए। आभार-प्रदर्शन पण्डित जिनकुमार शास्त्री, जयपुर ने किया।

JAANA का 24वाँ आध्यात्मिक शिविर सम्पन्न

जैन अध्यात्म अकेडमी ऑफ नॉर्थ अमेरिका के तत्त्वावधान में 24वाँ आध्यात्मिक शिविर 2 से 5 जुलाई 2023 तक ऑरलैंडो (USA) में सम्पन्न हुआ। **यह शिविर JAANA के प्रणेता डॉ. हुकमचंद भारिल्ल एवं निर्देशक डॉ. संजीवकुमार गोधा को समर्पित किया गया,** जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती संस्कृति गोधा, जयपुर उपस्थित रहीं।

शिविर का शुभारम्भ आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के 320वीं गाथा पर हुए वीडियो प्रवचन के साथ हुआ। इस प्रसंग पर डॉ. हुकमचंद भारिल्ल एवं डॉ. संजीवकुमार गोधा के वीडियो प्रवचन का भी प्रसारण किया गया। साथ ही श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार विधान का भव्य आयोजन भी किया गया।

इस अवसर पर पधारे वरिष्ठ विद्वानों में **पण्डित बिपिन शास्त्री, मुंबई; डॉ. शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर; पण्डित विपिन शास्त्री, नागपुर; डॉ. वीरसागर शास्त्री, दिल्ली एवं पण्डित आर्जव गोधा, जयपुर** का लाभ मिला।

धर्मनगरी महरौनी में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा संपन्न

महरौनी : ज्ञानतीर्थ पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर के तत्त्वावधान में ललितपुर के महरौनी नगर में 19 से 23 जून 2023 तक जैनधर्म का सर्वोत्कृष्ट महोत्सव श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव विविध अनुष्ठानों के साथ सम्पन्न हुआ।

इस महामहोत्सव की सफलता में प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. अभिनंदनकुमार शास्त्री, खनियांधाना; पण्डित बिपिन शास्त्री, मुंबई; श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर; डॉ. शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर; पण्डित पीयूष शास्त्री, जयपुर का योगदान उल्लेखनीय है। विद्वत्वर्ग में पण्डित राजेन्द्रकुमार जैन, जबलपुर; पण्डित राजकुमार शास्त्री, उदयपुर; डॉ. मनीष शास्त्री, मेरठ; पण्डित संजय शास्त्री, जेवर; पण्डित विराग शास्त्री, जबलपुर आदि का लाभ मिला।

पंच-दिवसीय महोत्सव के विशेष आकर्षण में श्री जिनेन्द्र शोभायात्रा, इन्द्रसभा, राजसभा, अष्टदेवियों की सुंदर प्रस्तुति, सोलह स्वप्न, पालना झूलन, मुनिराज का आहारदान, मनोहारी समवशरण एवं दिव्यध्वनि प्रसारण, पंचकल्याणक विषय पर विद्वत् संगोष्ठी, डॉ. शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर का विशेष सेमिनार व श्री संजीव जैन, उस्मानपुर की भजन संध्या के दृश्य अविस्मरणीय हैं।

इस महोत्सव में सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी के रूप में श्री धन्यकुमार-नीलम पवैया, महरौनी एवं माता-पिता के रूप में श्रीमती सरोज-कैलाशचंद्र चौधरी, महरौनी रहे।

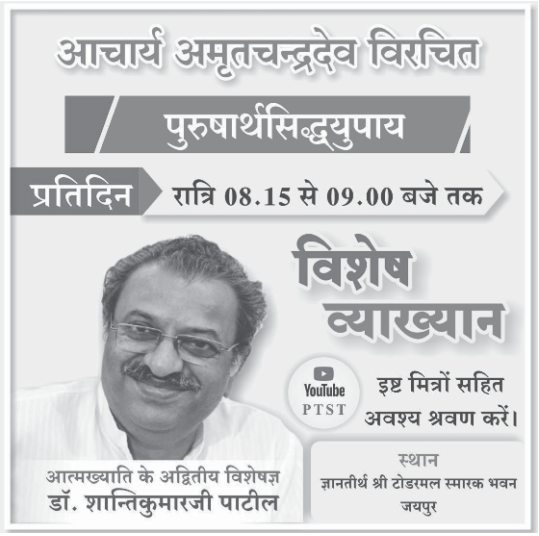

विशेष प्रभावना

बैंगलोर : यहाँ आषाढ़ माह में अगत अष्टाह्निका महापर्व के अवसर पर दिनांक 26 से 29 जून, 2023 तक पण्डित अरूणकुमार शास्त्री, जयपुर के विशेष प्रवचनों का लाभ स्थानीय समाज को मिला।

इस अवसर पर ग्रन्थाधिराज समयसार की पहली गाथा पर बहुत ही मार्मिक व्याख्यान हुए। तत्पश्चात् पण्डित अनिल शास्त्री, भिण्ड के व्याख्यानों का भी लाभ मिला।

इंडिया बुक ऑफ रिकार्ड में दर्ज

कहान समयसार संप्राप्ति शताब्दी वर्ष के अवसर पर देशभर में अनेकों समयसार कीर्तिस्तंभ स्थापित किए गए। कीर्तिस्तंभों में समयसार की 415 गाथाओं को मार्बल पर उकेरा गया है, यह कीर्तिस्तंभ 7 फीट ऊँचा सफेद मार्बल का बनाया गया है।

मुमुक्षुसमाज ने समयसार ग्रंथ पर सर्वाधिक (41) कीर्तिस्तंभ स्थापित कर भारत देश की संस्था **इंडिया बुक ऑफ रिकॉर्ड** में रिकॉर्ड दर्ज किया गया।

उक्त सम्पूर्ण परियोजना का संयोजन श्री विजय बड़जात्या इंदौर ने किया।

विद्वानों ने की पंचाध्यायी ग्रन्थ पर गहन चर्चा

कारंजा (महा.) : यहाँ दिनांक 20 से 22 जून 2023 तक पाण्डे राजमल्लजी द्वारा रचित श्री पंचाध्यायी पर विशेष संगोष्ठी आयोजित हुई।

संगोष्ठी के अन्तर्गत श्री पंचाध्यायी के अनेक विषयों पर विशद एवं गम्भीर चर्चा की गयी। जिसका आयोजन श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम एवं श्री महावीर ज्ञानोपासना समिति की ओर से श्री भरत भोरे ने किया तथा संयोजन का कार्यभार अर्हद् वार्ता ने संभाला।

इस अवसर पर पं. अभयकुमार शास्त्री, देवलाली; ब्र. हेमचन्द हेम, देवलाली; डॉ. राकेश शास्त्री, नागपुर; डॉ. वीरसागर शास्त्री, दिल्ली; पं. अरुण शास्त्री, जयपुर; डॉ. संजय शास्त्री, दौसा; पं. जे.पी. दोशी, मुम्बई; पं. कमलेश शास्त्री, ग्वालियर; आदि विद्वानों का सान्निध्य प्राप्त हुआ। स्थानीय विद्वानों में पं. आलोक शास्त्री, पं. चिंतामण शास्त्री, पं. पंकज शास्त्री एवं पण्डित संयम शास्त्री का समागम प्राप्त हुआ।

संयम की साधना, सिद्धों की अराधना, निजात्मा की प्रभावना के कारणभूत पर्वाधिराज दशलक्षण महापर्व

मंगलवार, 19 सितम्बर से गुरूवार, 28 सितम्बर, 2023 तक

दशलक्षण पर्व में प्रवचनार्थ स्वीकृति भेजें

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर के तत्त्वावधान में दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रवचनार्थ जाने वाले सभी विद्वानों, विदुषियों से अनुरोध है कि वे इस वर्ष भी दशलक्षण महापर्व में प्रभावनार्थ जाने हेतु अपनी स्वीकृति शीघ्र प्रदान करें।

आप अपनी स्वीकृति जयपुर कार्यालय में पत्र, फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप आदि किसी भी माध्यम से भेजे सकते हैं। यद्यपि सभी विद्वानों को दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग, जयपुर द्वारा अनुरोध पत्र भेजे जा चुके हैं; परन्तु यदि डाक की गड़बड़ी से पत्र समय पर प्राप्त न हुए हो तो आप स्वयमेव ही अपनी स्वीकृति अतिशीघ्र हम तक पहुँचाने का कष्ट करें।

दशलक्षण महापर्व हेतु आमंत्रण भेजें

दशलक्षण महापर्व के अवसर पर अपने नगर में विधान, प्रवचनार्थ विद्वानों को बुलाने हेतु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर को आमंत्रण-पत्र समाज, संस्था के लेटरहेड पर शीघ्र भेजें; ताकि समय रहते विद्वान की उचित व्यवस्था की जा सके। पत्र में पूर्ण पता लिखें - नाम, स्थान, मोबाइल एवं तत्काल सम्पर्क की सुविधा हेतु ई-मेल आई.डी. हो तो अवश्य भेज देवें।

अनेक बार समाज द्वारा दशलक्षण पर्व के अवसर पर प्रवचन हेतु विद्वानों को बुलाने का आमंत्रण अन्तिम समय पर प्राप्त होता है, जिससे व्यवस्था करने में कठिनाई होती है; अत: समाज/मंदिर के व्यवस्थापकों से अनुरोध है कि वे वे आमंत्रण-पत्र भिजवायें।

सम्पर्क सूत्र - दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग, ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन ए-४, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015
मोबाइल नं. - 8770845953
फोन नं. - 0141-2705581, 2707458
E-Mail : Ptstjaipur67@gmail.com

पंचास्तिकाय परिशीलन : विद्वत् संगोष्ठी

मंगलवार, 15 अगस्त 2023 (प्रथम सत्र)

अध्यक्ष – डॉ. वीरसागर शास्त्री, दिल्ली **संचालक** – पण्डित शाश्वत शास्त्री, भोपाल

1. डॉ. संजय शास्त्री, दौसा – आ. कुन्दकुन्ददेव व उनका पंचात्थिकायसंगहो
2. डॉ. ज्योति सेठी, जयपुर – अस्तिकाय का स्वरूप
3. पं. स्वानुभव शास्त्री, खनियांधाना – सत्-असत् का स्वरूप

बुधवार, 16 अगस्त 2023 (द्वितीय सत्र)

अध्यक्ष – पण्डित बिपिन शास्त्री, मुम्बई **संचालक** – पण्डित आकाश शास्त्री, अमायन

1. डॉ. दीपक शास्त्री वैद्य, जयपुर – संसारी व मुक्त जीवास्तिकाय का वर्णन
2. विदुषी विपाशा जैन, उदयपुर – द्रव्य के विभिन्न विभाजन व जानने से लाभ
3. पण्डित अखिल शास्त्री, जयपुर – जीव के कर्तृत्व-भोक्तृत्व का विश्लेषण

गुरूवार, 17 अगस्त 2023 (तृतीय सत्र)

अध्यक्ष – डॉ. श्रेयांश शास्त्री, जयपुर **संचालक** – पण्डित गौरव उखलकर, जयपुर

1. डॉ. गजेन्द्र शास्त्री, भरतपुर – धर्माधर्माकाशास्तिकाय का व्याख्यान
2. पं. संयम शास्त्री, नागपुर – द्रव्यों के विभिन्न विभाजन व जानने का लाभ
3. विदुषी श्रुति शास्त्री, जयपुर – जीव-अजीव पदार्थ का विवेचन

शुक्रवार, 18 अगस्त 2023 (चतुर्थ सत्र)

अध्यक्ष – पं. अभयकुमार शास्त्री, देवलाली **संचालक** – पं. आदर्श शास्त्री, बरगी

1. डॉ. मनीष शास्त्री, मेरठ – पुण्य-पाप सहित आस्रव पदार्थ का वर्णन
2. पण्डित अनिल शास्त्री, जगतपुरा – मोक्षमार्ग का स्वरूप
3. डॉ. ऋषभ शास्त्री, दिल्ली – चेतना गुण का स्वरूप व द्रव्य से अनन्यपना

शनिवार, 19 अगस्त 2023 (पंचम सत्र)

अध्यक्ष – पण्डित शैलेशभाई, तलोद **संचालक** – पण्डित अरविन्द शास्त्री, बंडा

1. डॉ. प्रवीणकुमार शास्त्री, इन्दौर – सूक्ष्म परसमय का विश्लेषण
2. पण्डित अमन शास्त्री, लोनी – संवर-निर्जरा व मोक्ष पदार्थ का वर्णन
3. पण्डित जिनकुमार शास्त्री, जयपुर – अरिहंतादि की भक्ति मुक्ति का हेतु है या नहीं

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2021-23*

विद्वत् समागम

बाल ब्र. अभिनन्दन शास्त्री, खनियांधाना	बाल ब्र. सुमतप्रकाश जैन, खनियांधाना
पण्डित अभयकुमार शास्त्री, देवलाली	पण्डित शैलेशभाई शाह, तलोद
श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर	पण्डित बिपिन शास्त्री, मुम्बई
श्री अध्यात्मप्रकाश भारिल्ल, मुम्बई	डॉ. शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर
डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया, मुम्बई	डॉ. शांतिकुमार पाटील, जयपुर
डॉ. वीरसागर शास्त्री, दिल्ली	डॉ. मनीष शास्त्री, मेरठ
पण्डित कमलचन्द जैन, पिड़ावा	पण्डित अरुणकुमार शास्त्री, बण्ड
पण्डित राजकुमार शास्त्री, उदयपुर	पण्डित पीयूष शास्त्री, जयपुर
डॉ. दीपक शास्त्री 'वैद्य', जयपुर	डॉ. प्रवीण शास्त्री, बांसवाड़ा
डॉ. संजय शास्त्री, दौसा	पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री, जयपुर

विशेष कार्यक्रम

ध्वजारोहण एवं उद्घाटन समारोह
रविवार, 13 अगस्त 2023 प्रात: 8:00 बजे
अध्यक्ष : श्री सुशील पूनमचन्द सेठी, दिल्ली
मुख्य अतिथि : श्री सुनील जैन, अक्षत बिल्डर्स, जयपुर

महाविद्यालय सिद्धान्त शास्त्री डिग्री एवं पुरस्कार वितरण समारोह
रविवार, 13 अगस्त 2023 दोपहर 3:00 बजे

अ. भारतवर्षीय दि. जै. विद्वत्परिषद् की विद्वत् संगोष्ठी
सोमवार, 14 अगस्त 2023 दोपहर 3:00 बजे
वर्तमान संदर्भ में विद्वत परिषद् की भूमिका एवं विद्वानों का कर्त्तव्य
● डॉ. प्रेमसुमन जैन, उदयपुर ● अनूपचन्द एडवोकेट, फिरोजाबाद ● डॉ. बी. एल. सेठी, रुडकी ● डॉ. ऋषभचन्द फौजदार, दमोह ● पं. परमात्मप्रकाश भारिल्ल ● डॉ. वीरसागर शास्त्री, दिल्ली ● डॉ. शान्तिकुमार पाटील ● डॉ. अखिल बंसल

महाविद्यालय विशेष संगोष्ठी
रविवार, 20 अगस्त 2023 दोपहर 2:30 बजे
पंचास्तिकाय संग्रह : एक अनुशीलन

परमागम ऑनर्स बाईएनुअल इवेन्ट
रविवार, 20 अगस्त 2023 रात्रि 7:30 बजे
दंसण मूलो धम्मो V/S चारित्तं खलु धम्मो

संस्थापक सम्पादक : तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

प्रकाशन तिथि : 21 जुलाई 2023

सम्पादक :
डॉ. शान्तिकुमार पाटील
शास्त्री, जैनदर्शनाचार्य, एम.ए., एम.फिल, पीएच.डी.
सह-सम्पादक :
पण्डित अरुणकुमार शास्त्री
शास्त्री, व्याकरणाचार्य, एम.ए., एम.फिल
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**